ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

आलासिंह जी

सिक्ख इतिहास, भाग–दूसरा

लेखक : स. जसबीर सिंघ

क्रांतिकारी जगत गुरू नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Websie:www.sikhworld.info

or

Websie:www.sikhhistory.in

नोट : यहां दी गई सारी जानकारी लेखक के अपने निजी विचार हैं। यह जरूरी नहीं कि सभी लेखक के विचारों से सहमत हों।

आलासिंह जी

कुप्प गाँव के युद्ध में अहमदशाह ने सिक्खों की वीरता के जौहर अपनी आँखों के सामने देखे । उसे अहसास हो गया कि सिक्ख केवल छापामार युद्ध ही नहीं लड़ते बल्कि आमने सामने युद्ध लड़ने में भी इनका कोई सानी नहीं । वह दोबाराअपनी नई नीतियाँ बनाने में विवश हो गया । उसे महसूस हुआ कि यदि सिक्खों को शत्रु के स्थान पर मित्र बना लि जाये तो शायद वह काबू में आ जायें, जिससे लाहौर नगर पर सिक्खों का मंडराता हुआ खतरा सदा के लिए टल जाये और वहाँ अफगानिस्तान की ओर से राज्यपाल की नियुक्ति चिरस्थाई सम्भव हो सके । अत: उसने बाबा आला सिंह जी से सम्पर्क किया और इन्हें संदेश भेजा कि वह 'खालसा दल' के साथ उसका समझौता करवा दे, यदि वे मेरे विरूद्ध उपद्रव न करें तो उसके बदले में जहाँ कहीं भी उनका क्षेत्र होगा, मैं उनका अधिकार स्वीकार कर लेता हूँ, इस विषय में मुझे से भले ही लिखवा लिया जाये ।

बाबा आला सिंह जी ने अपने वकील नानू सिंह ग्रेवाल के हाथों अब्दाली को यह संदेश 'दल खालसा' को भिजवा दिया । 'दल खालसा' के सरदारों ने, जिसमें सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया शिरोमणि थे, ने वकील को उत्तर दिया कि क्या कभी माँगने से कोई राज्य किसी को देता है ?उन्होंने आगे कहा – तुरकों और सिक्खों का मेल मिलाप होना उसी प्रकार असम्भव है जिस प्रकार बारूद और आग का ।

यह स्पष्ट उत्तर सुनकर अहमदशाह बौखला गया । तभी सरहिन्द के फौजदार ने उसे भड़काया और कहा – आला सिंह को तो आपने ही राज्य दिया है, अत: पहले इसी की खबर लेनी चाहिए । बस फिर क्या था, अब्दाली ने बिना सोचे बाबा आला सिंह जी के क्षेत्र बरनाला नगर पर आक्रमण कर दिया । बाबा आला सिंह जी तो तटस्थ नीति पर चल रहे थे, वह युद्ध के लिए बिल्कुल तैयार न थे, मरता क्या न करता की लोक कहावत अनुसार उन्होंने अब्दाली की सेना का सामना किया परन्तु पराजित हो गया और भागकर भवानीगढ़ के किले में शरण ली । अहमदशाह ने बरनाला और भवानीगढ़ को घेर लिया । अन्त में बाबा आला सिंह ने मध्यस्थतों के माध्यम से अब्दाली से एक समझौते के अन्तर्गत उसे पाँच लाख रूपये कर अथवा

(नज़राना) के रूप में और सवा लाख रूपये सिक्खी स्वरूप में बने रहने के लिए दिये । अहमदशाह ने यह विचार करके कि आला सिंह ही सिक्खों में मिलवर्तनशील है और यही कुछ नर्म तबीयत अर्थात कट्टरपंथी नहीं है, इसे ही इस प्रदेश में बना रहने दिया जाये ताकि शान्ति बनी रह सके । उससे प्रति वर्ष निर्धारित राशि कर (लगान) के रूप में लेना निश्चित किया गया।

अब्दाली ने पँजाब प्रान्त को अपने साम्राज्य का भाग बनाये रखने के लिए सिक्खों के डर के मारे मराठों के साथ संधि करने के लिए भी लिखपढ़ प्रारम्भ कर दी ताकि वे सिक्खों के साथ मिलकर उससे बदला लेने का प्रयत्न न करें अथवा कम से कम वे पँजाब में सिक्खों की सहायता न करें ।

श्री दरबार साहब (हरि मन्दिर) भवन का ध्वंस

अहमदशाह अब्दाली 3 मार्च, 1762 ईस्वी को बरनाला क्षेत्र से वापिस लाहौर नगर चला गया । उसने इस यात्रा के समय समस्त प्रदेश को खूब लूटा । अपने भयंकर रोष को कार्यरूप देने के लिए उसने वैशखीपर्व के शुभ अवसर पर अमृतसर नगर पर आक्रमण कर दिया। 13 अप्रैल को खालसा अपना जन्मदिन उत्सव मनाने के लिए श्री दरबार साहब पहुँच रहे थे। जैसे ही आक्रमण का समाचार फैला सभी सिक्ख बिखर गये । इस समय हजारों श्रद्धावान नर-नारी दर्शनार्थ एकत्रित हुए थे । एक दिनपहले 13 अप्रैल, 1762 को वह अमृतसर में प्रविष्ट हुआ। उस समय उस की आशा के विपरीत किसी नेभी उसका सामना नहीं किया । उसने तुरन्त आदेश जारी किया कि श्री हरि मन्दिर साहब की मुख्य इमारत तथा अकाल बुंगे को बारूद से उड़ा दिया जाए तथा 'रामदास' नामक पवित्र सरोवर को कूड़े कचरे से भर दिया जाये । इसके अतिरिक्त उसने मृतकों के अस्थिपंजर और कसाइयों के द्वारा गायों को कटवाकर भी पावन सरोवर में फैंकवा कर उसे अपवित्र बनाने में कोई कोरकसर बाकी न रहने दी ।

जब अहमदशाह अब्दाली खड़ा होकर अपनी आँखों के सामने श्री दरबार साहब

के मुख्य भवन को बारूद से उड़वा रहा था तो ईट का एक रोड़ा उसकी नाक पर आ लगा । जिसकी चोट से अब्दाली की नाक पर गहरा घाव हो गया । यह घाव इतना बढ़ गया कि उसका सारा नाक ही गल गया और नासूर (असाध्य फोड़े) के रूप में बदल गया । यही चोट लगभग दस वर्ष पश्चात् 23 अक्तूबर, 1772 को उसकी मृत्यु का कारण बनी ।

अब्दाली का विचार था कि सिक्खों को समाप्त करने के लिए उनकी प्रेरणा स्त्रोत सँस्थाओं को छिन्न-भिन्न कर दिया जाये तो सिक्खों में उत्साहवर्धक स्त्रोतों की समाप्ति स्वयंमेव ही हो जायेगी परन्तु यह उसकी भयंकर भूल थी । ईट और पत्थरों के बने भवनों को तो ध्वस्त करने में अब्दाली सफल हो गया किन्तु वह उन विचारों की जड़ें कैसे काट सकता था, जिन्हें इन पावन स्थलों ने अपने एक एक कण में संजो कर रखा था । भौतिकवाद को तूल देने वाला अब्दाली आध्यात्मिक यथार्थ और उसके पीछे छिपे आदर्शो को समझ नहीं सकता था। अत: वह सिक्खों की धर्म के प्रति आस्था की सूक्ष्म भावनाओं से एकदम अनभिज्ञ था ।

जैन खान और दीवान लच्छमी नारायण की मरम्मत

'घल्लूघारे' (दूसरे महाविनाश) में घायल बहुत से सिक्ख योद्धा मालवा क्षेत्र में अपना उपचार करवा रहे थे कि तभी उन्हें श्री दरबार साहब के ध्वस्त करने का समाचार मिला। इस अपमान ी सूचना सुनते ही उनका खून खौल उठा । सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया ने तभी समस्त सिक्ख सैनिक और उनके नेताओं को एकत्रित करके सर्वप्रथम सरहिन्द पर आक्रमण करने की योजना सुझाई । जैन खान अभी तक इस बात से प्रसन्न था कि कुप्प के मैदान में चोटें खाने वाले सिक्ख एक दशक से पहले सिर नहीं उठा सकेंगे परन्तु प्रभु कृपा से सिक्ख तो कुछ ही महीनों में शक्तिपरीक्षण के लिए तैयार हो गये ।

सिक्ख सेनापतियों ने योजना अनुसार सरहिन्द पर इतने जोरदार ढँग से हमला बोला कि जैन खान के हाथों के तोते उड़ गये, वह सम्भल ही नहीं सका। उसने जल्दी से 50,000 रूपये भेंट करके सिक्खों को टालने की चेष्टा की । वास्तव में जैन खान की चालबाजी यह थी कि जब सिक्ख रूपया वसूल करके घरों को लौट रहे होंगे तो उन परपीछे से धावा बोल कर फिर से धन लूट कर हथिया लिया जाये और उनकी खूब पिटाई भी कर दी जाये

परन्तु सिक्ख भी कूट नीति में विशेषज्ञ थे । वे इन छल भरी चालों से भली भान्ति परिचित थे । अत: वे भी पूर्णत: नहीं लौटे, कुछ घात लगाकर छिपकर बैठ गये । जैसे ही शत्रु पीछे से वार करने लगा, सिक्ख तुरन्त सतर्क हुए और वे लौट पड़े । फिर तो खुले मैदान में घमासान युद्ध हुआ । इस युद्ध में सिक्खों के हाथ बहुत सा धन अथवा रण सामग्री हाथ लगी ।

तदुपरान्त सरदार जस्सा सिंह ने अब्दाली को चुनौती देने के लिए समूह दोआबा क्षेत्र को छान मारा और सभी शत्रु शिविरों का सफाया कर दिया । इस प्रकार अन्य सरदारों ने भी विभिन्न स्थानों पर बलपूर्वक अधिकार कर लिया । इतना ही नहीं, अगस्त, 1762 के अन्तिम दिनों में 'दल खालसा' का एक बड़ा दस्ता लोगों से लगान वसूल करता हुआ करनाल जा पहुँचा और पूरा एक महीना पानीपत डटे रहे । पानीपत में उनका स्थिर शिविर होने के डर के कारण मुगल बादशाह के दूतों का अब्दाली के पास आवागमन पूरी तरह ठप्प हो गया ।

अमृतसर के सिक्ख अफगान युद्ध में अब्दाली की भारी पराजय

सन् 1762 ईस्वी के सितम्बर माह में दल खालसा के जत्थेदारों ने विचार किया कि अब उचित समय है, अब्दाली से श्री दरबार साहब के अपमान का बदला लिया जाये । उन्होंने समस्त पंथ के लिए घोषणा करवा दी कि इस दीवाली पर्व पर अमृतसर सरबत खालसा सम्मेलन होगा । अत: सभी 'नानक राम लेवा' (सिक्ख धर्म पर विश्वास करने वाले) श्री अमृतसर नगर में 'तैयार बर तैयार' (रण सामग्री से सुसज्जित) होकर पहुँचे । समस्त सिक्ख जगत इस अवसर पर श्री दरबार साहब के ध्वस्त भवन को देखकर अब्दाली की करतूतों का उससे प्रतिशोध (बदला) लेने के लिए परामर्श करने के लिए अमृतसर उमड़ पड़ा ।

दूरदराज के सिक्ख तो हरि मन्दिर साहब के दर्शनों के लिए बेचैन थे । अत: अनुमानत: साठ हजार के लगभग अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित सिक्ख श्री दरबार साहब के अपमान का बदला लेने और अपना बलिदान देने के लिए एकत्रित हुए । उस समय तक अहमदशाह अब्दाली भी कलानौर में पहुँच चुका था । वह यह सुनकर बड़ा आश्चर्यचकित हुआ कि 'बड़े घल्लूघारे' के बावजूद भी सिक्ख इतनी जल्दी कैसे सम्भल गये हैं । वह अब पुन:

सिक्खों से नहीं उलझना चाहता था क्योंकि उसे ज्ञात हो गया कि था कि यह किसी का भी भय नहीं मानते और इन्हें मौत का तो डर होता हीनहीं, यह तो सिर पर कफन बांध कर शहीदों की मृत्यु मरने का चाव लेकर रणक्षेत्र में जूझते हैं । उसे अपनी करतूत (भयंकर की गई भूल) का अहसास था, वह अब नये सिरे से सिक्खों के साथ पंगा लेने से बचने के लिए कूटनीति का मार्ग ढूँढने लगा । उसने सिक्ख जत्थेदारों के पास अपना एक प्रतिनिधिमंडल भेजा और संदेश में कहा - युद्ध करना व्यर्थ है, रक्तपात के स्थान पर समस्या का समाधान वार्तालाप से ढूँढ कर कोई नई संधि कर ली जाए ।

सिक्ख तो दरबार साहब के अपमान के विष का घूंट पीये हुए थे और मरने-मारने के लिए दाँत पीस रहे थे । अत: आवेश में कुछ सिक्खों ने अब्दाली के दूत और उसके साथियों का माल-असवाब लूटकर उन्हें भगा दिया । इस अपमान के कारण अहमदशाह का चुप बैठे रहना एक कठिन सी बात थी । अत: उसने दीवाली के एक दिन पूर्व सांयकाल को अमृतसर में प्रवेश कर गया ।

साठ हजार सिक्खों ने अकाल तख्त के सम्मुख होकर अपने जत्थेदार के नेतृत्त्व में शपथ ली कि जब तक वे अहमदशाह अब्दाली से उसके सारे अयाचारों का प्रतिशोध न ले लेंगे तब तक शान्ति से न बैठेंगे क्योंकि वे अपने पूज्य गुरूधामों का अपमान कभी भी सहन नहीं कर सकते थे ।

सिक्खों ने 17 अक्तूबर, 1762 को तड़के ही अकाल तख्त के सामने 'अरदासा सोधकर' (प्रार्थना के बाद) अब्दाली की सेना पर धावा बोल दिया । सारा दिन घमासान युद्ध होता रहा । सिक्खों के हृदय में दुर्रानियों के विरूद्ध दोहरा रोष था । एक तो 'घल्लूघारे' में मारे गये परिवारों के कारण और दूसरा दरबार साहब के भवन को ध्वस्त करने और सरोवर का अपमान करने के कारण, इसलिए वे जान हथेली पर रखकर बदले की भावना से विजय अथवा मृत्यु में से एक को प्राप्त करना चाहते थे । अमावस्या का दिन था, अत: इतिफाक से दोपहर 3 बजे के लगभग सम्पूर्ण सूर्य ग्रहण लग गया, जिसके कारण घोर अन्धेरा छा गया, इस प्रकार दिन में तारे दिखाई पड़ने लगे ।

अब्दाली की सेना सिक्खों की मार झेल न सकी । वह तो अपनी सुरक्षा का ध्यान

रखकर लड़ रहे थे परन्तु सिक्ख शहीद होना चाहते थे । अत: वे अभय होकर शत्रु पर धावा बोल रहे थे । इसी कारण अब्दाली के सैनिकों के पैर उखड़ गये और वे पीछे हटने लगे । प्रकृति ने भी उन्हें भागने का पूरा अवसर प्रदान किया, पूर्ण सूर्य ग्रहण के कारण समय से पहले ही अंधेरा हो गया, अत: वे अंधेरे का लाभ उठाते हुए वापिस लाहौर नगर की ओर भागने लगे परन्तु सिक्खों ने उनका पीछा किया । भागते हुए अफगान सैनिकों से बहुत सी रण सामग्री छीन ली गई ।

इस युद्ध में अहमदशाह को बुरी तरह पराजय का मुँह देखना पड़ा और वह रात के समय लाहौर भाग गया । इस प्रकार उसकी जान बच गई । अब्दाली ने भारत की उस समय की सबसे बड़ी शक्ति मराठों को तो परास्त किया था परन्तु वह सिक्खों के सामने बेवश और लाचार होकर रह गया ।

अकाल तख्त के सम्मुख एक पीड़ित ब्राह्मण की पुकार

13 अप्रैल, 1763 की वेशाखी के महोत्सव के समय 'सरबत खालसा' सम्मलेलन होना निश्चित था । दूर दूर से सिक्ख संगत अथवा योद्धा दरबार साहब के दर्शनों के लिए अमृतसर पधारे । सभी सरदार और मिसलदार अपने अपने जत्थों के संग जब अकाल तख्त के समक्ष आयोजित दीवान (सरबत खालसा सम्मेलन) में भाग ले रहे थे । ठीक उसी समय यक युवक हाथ बाँधे, दीवान में उपस्थित हुआ । वह पँजाब के कसूर नगर से आया था । उसने गुहार लगाई की कि कसूर क्षेत्र का हाकिम असमान खान ने उसकी नव नवेली दुल्हन, जिसकी वह उस समय डोली अपने घर ले जा रहा था, रास्ते में छीन ली है । अत: उस अत्याचारी से उसे उसकी पत्नी वापिस दिलवा दी जाये । वह इस कार्य के लिए बहुत आशा लेकर खालसा पंथ से निवेदन करता है क्योंकि उसे ज्ञात हुआ है कि गुरू पंथ ही दीन दुखियों का रक्षक है । अत: वह सहायता प्राप्ति हेतु पूर्ण भरोसे से गुरू पंथ के संरक्षण में हाज़िर हुआ है।

संजोगवश उसी समय 'कीर्तनी जत्था' श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा वीर रस से रचित शब्द (सैंय्या) गायन करके ही हटे थे 'देहु शिवा वर मोहि इहै, शुभ करमन से कबहूं ना टरो' ।

दल खालसा के नायक सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया जी ने यह चीत्कार बहुत ध्यान से सुनी, वह उस समय करूणामय पुकार से भावुक हो उठे । वह अपने को रोक न सके, उन्होंने उसी समय म्यान से तलवार खींच ली और अपने योद्धाओं को इस प्रकार ललकारा

सिक्ख वीरो ! यह परीक्षा की घड़ी है, फरियादी अकाल तख्त के सम्मुख हाज़िर हुआ है । यहाँ से कोई फरियादी निराश नहीं जाता, यही गुरूदेव का विरद है क्योंकि इस तख्त का निर्माणसँसार में हो रहे अन्याय कोरोकने के लिए किया गया है । सत्य और न्याय की रक्षा ही हमारा मूल उद्देश्य है, जिसे हमें निष्ठा से कर्त्तव्यपरायण होकर पूर्ण करना चाहिए ।

'दल खालसा' के नायक जस्सा सिंह के जोशीले शब्दों का तुरन्त चारों ओर प्रभाव देखने को मिला परन्तु कुछ सरदार इस विषय में गम्भीर रूप में विचारविमर्श करना चाहते थे । इस पर उन्होंने आपस में परामर्श किया । उनके विचार से कसूर नगर पठानों का गढ़ है । असमान खान एक अनुभवी सेनापति और उच्च कोटि का योद्धा है । हम लोगों ने अभी बड़ी कठिनाई से सुख की साँस ली है । अभी हमारी कई योजनाएं अधूरी पड़ी हुई हैं । इसके अतिरिक्त कसूर नगर में कई छोटे किले भी हैं,ख जिनमें बहुत सी युद्ध सामग्री हो सकती है। इसके विपरीत हमारे पास पूर्ण सेना भी नहीं है । ऐसे अभियानों में कम से कम दस हजार सिक्ख शहीद हो सकते हैं । इस पर बात भी केवल एक स्त्री को लौटा लाने की है, जिसके लिए दस हजार जवानों की बलि दी जाए । क्या दूरदर्शिता होगी ?अत: खालसा जी को भावनाओं में नहीं बहना चाहिए, बल्कि सूझबूझ से पग उठाना चाहिए ।

ऐसे में सरदार जस्सा सिंह का मुख आवेश में तमतमा उठा । उन्होंने गर्जते हुए कहा –

'यह ब्राह्मण किसी व्यक्ति के पास नहीं आया, यह तो गुरू पंथ के पास आया है, यह गुहार अकाल तख्त पर कर रहा है, एक अबला नारी की रक्षा के लिए । अकाल तख्त तो मीरी पीरी के सच्चे पातशाह का है । यदि उसके अनुयायी एक फरियादी का मान न रख कर घाटे लाभ की सौदेबाज़ी में पड़ कर 'सिदक (श्रद्धा विश्वास) हार जायेंगे तो कल को कौन हमारे गुरू जी को दुष्ट दमन कहेगा और कौन उन के परोपकारों पर विश्वास करेगा कि ये गुरू के दर्शाये आदर्श मार्ग पर चल कर मर मिटने को तैयार हैं ?

सरदार जस्सा सिंह जी की ललकार में तथ्य था । अतः तुरन्त निर्णय लिया गया कि श्री गुरू ग्रंथ साहब जी से हुक्मनामा लिया जाये जो हुक्म होगा वैसा ही किया जायेगा । तभी ग्रंथी सिंह ने हुक्म लिया - तो निम्नलिखित वाक (हुक्म) हुआ -

धिर धरि बैसहु हरजन पिआरे ।

सतिगुरू तुमरे काज सवारे । (रहाउ)

दुषट दूत परमेशर मारे ।

जन की पैज रखी करतारे ।

गुरू जी का हुक्म स्पष्ट था । अब देर किस बात की थी । ऐसी मनोदशा में जयकारों की गूँज प्रत्येक दिशा में सुनाई देने लगी । सरदार जस्सा सिंह कसूर नगर की तरफ कूच कर गये । उनका अनुसरण सभी ने किया । जत्थेदार चढ़त सिंह, हरी सिंह भंगी तथा अन्य सरदार अपने अपने योद्धा लेकर कसूर नगर की तरफ आगे बढ़ते ही चले गये । दोपहर तक सभी सिक्ख सैनिक कसूर नगर में प्रवेश कर गये ।

सन् 1763 में यह रमजान का महीना था । गर्मी जोरों पर थी । कसूर के फौजी भूमिगत आरामघर में घुसे हुए थे । सिक्खों के आकस्मिक आक्रमण के कारण पठानों में भगदड़ मच गई । फिरभी उसमान खान ने लड़ने का साहस किया परन्तु सब व्यर्थ रहा । वह जल्दी ही मारा गया । हाथों-हाथ सिक्खों को भारी विजय प्राप्त हुई परन्तु इसके लिए उन्हें कुछ कीमत भी चुकानी पड़ी । इस प्रकार उन्होंने एक दानव के चंगुल से बेचारे ब्राह्मण की स्त्री को मुक्त करवा दिया

युवक ब्राह्मण ने जत्थेदारों के प्रति आभार प्रकट किया । उत्तर में दल खालसा के नायक सरदार जस्सा सिंह जी ने कहा - 'धन्यवाद तो आप सत्व गुरू का करो, जिसने हम जैसे तुच्छ व्यक्तियों को एक भला काम करने का बल प्रदान किया है' ।

जालन्धर के फौजदार की मरम्मत

सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया जी ने अहमदशाह द्वारा नियुक्त जालन्धर का फौजदार सआदत खान को ललकारा । वह तो जालन्धर से बाहर आने का साहस तक न कर सका । अत: जस्सा सिंह जी ने उसके नायब विशम्बर दास लसाड़ा को उड़मुड़ टांड में पराजित करके वहाँ के बहुत से गाँव पर अपना नियन्त्रण कर लिया । इस प्रकार सआदत खान भय के मारे भाग कर लाहौर चला गया । तद्पश्चात उन्होंने काठगढ़ के गोले खान तथा शंकरगढ़ के मुस्लिम राजपूतों के होश ठिकाने लगाकर दोनों स्थानों पर अधिकार कर लिया ।

इस प्रकार समस्त सिक्खों के लिए अमृतसर से आनन्दपुर जाने वाला मार्ग सदैव के लिए सुरक्षित हो गया ।

मालवा क्षेत्र की सुधाई

दल खालसा के अन्य सरदारों ने जस्सा सिंह की आज्ञा प्राप्त कर मालवा क्षेत्र के नगर मालेरकोट पर आक्रमण कर दिया । इसके नवाब भीखन खान ने 'बड़े घल्लूघारे' के समय सिक्खों पर हमलावर होकर उनको घोर यातानाएं दी थी । छोटी सी मुठभेड़ में नवाब भीखन खान मारा गया । इसी प्रकार रंगड़ जाति के मुस्लिम राजपूतों ने 'घल्लूघारे' के समय सिक्खों पर बिना कारण धावे बोले थे । उनको दण्ड दिये और उनको सबक सिखा दिया कि विदेशी का साथ देना कितना मँहगा पड़ सकता है ।

सिक्ख अब सरहिन्द नगर और उसके आसपास के क्षेत्रों का सदैव के लिए कलेश मिटा देना चाहते थे । बस उनको केवल अपने सेनानायक सरदार जस्सा सिंह के संकेत की प्रतीक्षा रहती थी ।

समाप्त